पाठ 1.2 : गुल्ली–डंडा

प्रेमचंद

AHA13I

***प्रेमचंद** का जन्म 31 जुलाई सन् 1880 में बनारस जिले के लमही ग्राम में हुआ था। उनका वास्तविक नाम धनपत राय था। प्रेमचंद की कहानियाँ मानसरोवर के 8 भागों में संकलित हैं। **सेवासदन, प्रेमाश्रम, कर्मभूमि, गबन, निर्मला, रंगभूमि, कायाकल्प, गोदान** इनके प्रमुख उपन्यास हैं। कथा–साहित्य के अतिरिक्त प्रेमचंद ने निबंध एवं अन्य प्रकार के गद्य लेखन के साथ ही **हंस, माधुरी, जागरण** जैसी प्रसिद्ध पत्रिकाओं का संपादन भी किया। प्रेमचंद, साहित्य को सामाजिक परिवर्तन का सशक्त माध्यम मानते हैं। उनके कथा साहित्य में तत्कालीन समाज की जीती–जागती बहुरंगी तस्वीर है जिसमें किसानों और मजदूरों की दयनीय स्थिति, स्त्रियों की दुर्दशा तथा सामाजिक विषमताओं का यथार्थवादी चित्रण है। सन् 1936 में इस महान कथाकार का देहांत हो गया।*

हमारे अंगरेजी दोस्त मानें या न मानें, मैं तो यही कहूँगा कि गुल्ली–डंडा सब खेलों का राजा है। अब भी कभी लड़कों को गुल्ली–डंडा खेलते देखता हूँ, तो जी लोट–पोट हो जाता है कि इनके साथ जाकर खेलने लगूँ। न लॉन की जरूरत, न कोर्ट की, न नेट की, न थापी की। मजे से किसी पेड़ से एक टहनी काट ली, गुल्ली बना ली, और दो आदमी भी आ जाएँ, तो खेल शुरू हो गया।

विलायती खेलों में सबसे बड़ा ऐब है कि उनके सामान महँगे होते हैं। जब तक कम–से–कम एक सैकड़ा न खर्च कीजिए, खिलाड़ियों में शुमार ही नहीं हो पाता। यहाँ गुल्ली–डंडा है कि बिना हर्र–फिटकरी के चोखा रंग देता है, पर हम अंगरेजी चीजों के पीछे ऐसे दीवाने हो रहे हैं कि अपनी सभी चीजों से अरुचि हो गई। स्कूलों में हरेक लड़के से तीन–चार रुपये सालाना केवल खेलने की फीस ली जाती है। किसी को यह नहीं सूझता कि भारतीय खेल खिलाएँ, जो बिना दाम–कौड़ी के खेले जाते हैं। अंगरेजी खेल उनके लिए हैं, जिनके पास धन है। गरीब लड़कों के सिर क्यों यह व्यसन मढ़ते हो? ठीक है, गुल्ली से आँख फूट जाने का भय रहता है, तो क्या क्रिकेट से सिर फूट जाने, तिल्ली फट जाने, टाँग टूट जाने का भय नहीं रहता! अगर हमारे माथे में गुल्ली का दाग आज तक बना हुआ है, तो हमारे कई दोस्त ऐसे भी हैं, जो थापी को बैसाखी से बदल बैठे। यह अपनी–अपनी रुचि है। मुझे गुल्ली ही सब खेलों से अच्छी लगती है और बचपन की मीठी स्मृतियों में गुल्ली ही सबसे मीठी है।

वह प्रातःकाल घर से निकल जाना, वह पेड़ पर चढ़कर टहनियाँ काटना और गुल्ली–डंडे बनाना, वह उत्साह, वह खिलाड़ियों के जमघट, वह पदना और पदाना, वह लड़ाई–झगड़े, वह सरल स्वभाव, जिससे छूत–अछूत, अमीर–गरीब का बिल्कुल भेद न रहता था, जिसमें अमीराना चोंचलों की, प्रदर्शन की, अभिमान की गुंजाइश ही न थी, यह उसी वक्त भूलेगा जब .... जब ...। घरवाले बिगड़ रहे हैं, पिताजी चौके पर बैठे वेग से रोटियों पर अपना क्रोध उतार रहे हैं, अम्माँ की दौड़ केवल द्वार तक है, लेकिन उनकी विचारधारा में मेरा अंधकारमय भविष्य टूटी हुई नौका की तरह डगमगा रहा है और मैं हूँ कि पदाने में मस्त हूँ, न नहाने की सुधि है, न खाने की। गुल्ली है तो जरा–सी, पर उसमें दुनिया–भर की मिठाइयों की मिठास और तमाशों का आनंद भरा हुआ है।

मेरे हमजोलियों में एक लड़का गया नाम का था। मुझसे दो–तीन साल बड़ा होगा। दुबला, बंदरों की–सी लंबी–लंबी, पतली–पतली उँगलियाँ, बंदरों की–सी चपलता, वही झल्लाहट। गुल्ली कैसी ही हो, पर इस तरह लपकता था, जैसे छिपकली कीड़ों पर लपकती है। मालूम नहीं, उसके माँ–बाप थे या नहीं, कहाँ रहता था, क्या खाता था; पर था हमारे गुल्ली–क्लब का चैंपियन। जिसकी तरफ वह आ जाए, उसकी जीत निश्चित थी। हम सब उसे दूर से आते देख, उसका दौड़कर स्वागत करते थे और अपना गोइयाँ बना लेते थे।

एक दिन मैं और गया दो ही खेल रहे थे। वह पदा रहा था। मैं पद रहा था, मगर कुछ विचित्र बात है कि पदाने में हम दिन–भर मस्त रह सकते है; पदना एक मिनट का भी अखरता है। मैंने गला छुड़ाने के लिए सब चालें चलीं, जो ऐसे अवसर पर शास्त्र–विहित न होने पर भी क्षम्य हैं, लेकिन गया अपना दाँव लिए बगैर मेरा पिंड न छोड़ता था।

मैं घर की ओर भागा। अनुनय–विनय का कोई असर न हुआ था।

गया ने मुझे दौड़कर पकड़ लिया और डंडा तानकर बोला–मेरा दाँव देकर जाओ। पदाया तो बड़े बहादुर बनके, पदने के बेर क्यों भागे जाते हो।

''तुम दिन–भर पदाओ तो मैं दिन–भर पदता रहूँ?''

''हाँ, तुम्हें दिन–भर पदना पड़ेगा।''

''न खाने जाऊँ, न पीने जाऊँ?''

''हाँ! मेरा दाँव दिए बिना कहीं नहीं जा सकते।''

''मैं तुम्हारा गुलाम हूँ?''

''हाँ, मेरे गुलाम हो।''

''मैं घर जाता हूँ, देखूँ मेरा क्या कर लेते हो!''

''घर कैसे जाओगे; कोई दिल्लगी है। दाँव दिया है, दाँव लेंगे।''

'अच्छा, कल मैंने अमरूद खिलाया था। वह लौटा दो।'

'वह तो पेट में चला गया।'

'निकालो पेट से। तुमने क्यों खाया मेरा अमरूद?'

'अमरूद तुमने दिया, तब मैंने खाया। मैं तुमसे माँगने न गया था।'

'जब तक मेरा अमरूद न दोगे, मैं दाँव न दूँगा।'

मैं समझता था, न्याय मेरी ओर है। आखिर मैंने किसी स्वार्थ से ही उसे अमरूद खिलाया होगा। कौन निःस्वार्थ किसी के साथ सलूक करता है। भिक्षा तक तो स्वार्थ के लिए देते हैं। जब गया ने अमरूद खाया, तो फिर उसे मुझसे दाँव लेने का क्या अधिकार है? रिश्वत देकर तो लोग खून पचा जाते हैं, यह मेरा अमरूद यों ही हजम कर जाएगा? अमरूद पैसे के पाँचवाले थे, जो गया के बाप को भी नसीब न होंगे। यह सरासर अन्याय था।

गया ने मुझे अपनी ओर खींचते हुए कहा—मेरा दाँव देकर जाओ, अमरूद—समरूद मैं नहीं जानता।

मुझे न्याय का बल था। वह अन्याय पर डटा हुआ था। मैं हाथ छुड़ाकर भागना चाहता था। वह मुझे जाने न देता! मैंने उसे गाली दी, उसने उससे कड़ी गाली दी, और गाली—ही नहीं, एक चाँटा जमा दिया। मैंने उसे दाँत काट लिया। उसने मेरी पीठ पर डंडा जमा दिया। मैं रोने लगा। गया मेरे इस अस्त्र का मुकाबला न कर सका। मैंने तुरंत आँसू पोंछ डाले, डंडे की चोट भूल गया और हँसता हुआ घर जा पहुँचा।

उन्हीं दिनों पिताजी का वहाँ से तबादला हो गया। नई दुनिया देखने की खुशी में ऐसा फूला कि अपने हमजोलियों से बिछुड़ जाने का बिलकुल दुःख न हुआ। पिताजी दुःखी थे। वह बड़ी आमदनी की जगह थी। अम्माजी भी दुःखी थीं। यहाँ सब चीज सस्ती थीं, और मुहल्ले की स्त्रियों से घरौंव—सा हो गया था, लेकिन मैं मारे खुशी के फूला न समाता था। लड़कों में जीट उड़ा रहा था, वहाँ ऐसे घर थोड़े ही होते हैं। ऐसे—ऐसे ऊँचे घर हैं कि आसमान से बातें करते हैं। वहाँ के अंगरेजी स्कूल में कोई मास्टर लड़कों को पीटे, तो उसे जेहल हो जाए। मेरे मित्रों की फैली हुई आँखें और चकित मुद्रा बतला रही थीं कि मुझसे उनकी निगाह में कितनी स्पर्द्धा हो रही थी! मानो कह रहे थे—तू भाग्यवान है भाई, जाओ। हमें तो इसी ऊजड़ ग्राम में जीना भी है और मरना भी।

बीस साल गुजर गए। मैंने इंजीनियरी पास की और उसी जिले का दौरा करता हुआ उसी कस्बे में पहुँचा और डाकबँगले में ठहरा। उस स्थान को देखते ही इतनी मधुर बाल—स्मृतियाँ हृदय में जाग उठीं कि मैंने छड़ी उठाई और कस्बे की सैर करने निकला। आँखें किसी प्यासे पथिक की भाँति बचपन के उन क्रीड़ा—स्थलों को देखने के लिए व्याकुल हो रही थीं; पर उस परिचित नाम के सिवा वहाँ और कुछ परिचित न था। जहाँ खँडहर था, वहाँ पक्के मकान खड़े थे। जहाँ बरगद का पुराना पेड़ था, वहाँ अब एक सुन्दर बगीचा था। स्थान की काया पलट हो गई थी। अगर उसके नाम और स्थिति का ज्ञान न होता, तो मैं उसे पहचान भी न सकता। बचपन की संचित और अमर स्मृतियाँ बाँहें खोले अपने उन पुराने मित्रों से गले मिलने को अधीर हो रही थीं; मगर वह दुनिया बदल गई थी। ऐसा जी होता था कि उस धरती से लिपटकर रोऊँ और कहूँ, तुम मुझे भूल गई! मैं तो अब भी

तुम्हारा वही रूप देखना चाहता हूँ।

सहसा एक खुली जगह में मैंने दो–तीन लड़कों को गुल्ली–डंडा खेलते देखा। एक क्षण के लिए मैं अपने को बिल्कुल भूल गया। भूल गया कि मैं एक ऊँचा अफसर हूँ, साहबी ठाठ में, रौब और अधिकार के आवरण में।

जाकर एक लड़के से पूछा–क्यों बेटे, यहाँ कोई गया नाम का आदमी रहता है?

'हाँ, है तो।'

'जरा उसे बुला सकते हो?'

लड़का दौड़ता हुआ गया और एक क्षण में एक पाँच हाथ के काले देव को साथ लिए आता दिखाई दिया। मैं दूर से ही पहचान गया। उसकी ओर लपकना चाहता था कि उसके गले लिपट जाऊँ, पर कुछ सोचकर रह गया। बोला–कहो गया, मुझे पहचानते हो?

गया ने झुककर सलाम किया–हाँ मालिक, भला पहचानूँगा क्यों नहीं! आप मजे में हो?

'बहुत मजे में। तुम अपनी कहो।'

'डिप्टी साहब का साईस हूँ।'

'मतई, मोहन, दुर्गा सब कहाँ हैं? कुछ खबर है?'

'मतई तो मर गया, दुर्गा और मोहन दोनों डाकिया हो गए हैं। आप?'

'मैं तो जिले का इंजीनियर हूँ।'

'सरकार तो पहले ही बड़े जहीन थे?'

'अब कभी गुल्ली–डंडा खेलते हो?'

गया ने मेरी ओर प्रश्न–भरी आँखों से देखा–अब गुल्ली–डंडा क्या खेलूँगा सरकार, अब तो धंधे से छुट्टी नहीं मिलती।

'आओ, आज हम–तुम खेलें। तुम पदाना, हम पदेंगे। तुम्हारा एक दाँव हमारे ऊपर है। वह आज ले लो।'

गया बड़ी मुश्किल से राजी हुआ। वह ठहरा टके का मजदूर, मैं एक बड़ा अफसर। हमारा और उसका क्या जोड़? बेचारा झेंप रहा था। लेकिन मुझे भी कुछ कम झेंप न थी; इसलिए नहीं कि मैं गया के साथ खेलने जा रहा था, बल्कि इसलिए कि लोग इस खेल को अजूबा समझकर इसका तमाशा बना लेंगे और अच्छी–खासी भीड़ लग जाएगी। उस भीड़ में वह आनंद कहाँ रहेगा, पर खेले बगैर तो रहा नहीं जाता। आखिर निश्चय हुआ कि दोनों जने बस्ती से बहुत दूर खेलेंगे और बचपन की उस मिठाई को खूब रस ले–लेकर खाएँगे। मैं गया को लेकर डाकबँगले पर आया और मोटर में बैठकर दोनों मैदान की ओर चले। साथ में एक कुल्हाड़ी ले ली। मैं गंभीर भाव धारण किए हुए था, लेकिन गया इसे अभी तक मजाक ही समझ रहा था। फिर भी उसके मुख पर उत्सुकता

या आनंद का कोई चिह्न न था। शायद वह हम दोनों में जो अंतर हो गया था, यही सोचने में मगन था।

मैंने पूछा–तुम्हें कभी हमारी याद आती थी गया? सच कहना।

गया झेंपता हुआ बोला–मैं आपको याद करता हजूर, किस लायक हूँ। भाग में आपके साथ कुछ दिन खेलना बदा था; नहीं तो मेरी क्या गिनती?

मैंने कुछ उदास होकर कहा–लेकिन मुझे तो बराबर, तुम्हारी याद आती थी। तुम्हारा वह डंडा, जो तुमने तानकर जमाया था, याद है न?

गया ने पछताते हुए कहा–वह लड़कपन था सरकार, उसकी याद न दिलाओ।

'वाह! वह मेरे बाल–जीवन की सबसे रसीली याद है। तुम्हारे उस डंडे में जो रस था, वह तो अब न आदर–सम्मान में पाता हूँ, न धन में।'

इतनी देर में हम बस्ती से कोई तीन मील निकल आए। चारों तरफ सन्नाटा है। पश्चिम ओर कोसों तक भीमताल फैला हुआ है, जहाँ आकर हम किसी समय कमल पुष्प तोड़ ले जाते थे और उसके झूमक बनाकर कानों में डाल लेते थे। जेठ की संध्या केसर में डूबी चली आ रही है। मैं लपककर एक पेड़ पर चढ़ गया और एक टहनी काट लाया। चटपट गुल्ली–डंडा बन गया।

खेल शुरू हो गया। मैंने गुच्ची में गुल्ली रखकर उछाली। गुल्ली गया के सामने से निकल गई। उसने हाथ लपकाया, जैसे मछली पकड़ रहा हो। गुल्ली उसके पीछे जाकर गिरी। यह वही गया है, जिसके हाथों में गुल्ली जैसे आप ही आकर बैठ जाती थी। वह दाहिने–बाएँ कहीं हो, गुल्ली उसकी हथेली में ही पहुँचती थी। जैसे गुल्लियों पर वशीकरण डाल देता हो। नई गुल्ली, पुरानी गुल्ली, छोटी गुल्ली, बड़ी गुल्ली, नोकदार गुल्ली, सपाट गुल्ली सभी उससे मिल जाती थी। जैसे उसके हाथों में कोई चुंबक हो, गुल्लियों को खींच लेता हो; लेकिन आज गुल्ली को उससे वह प्रेम नहीं रहा। फिर तो मैंने पदाना शुरू किया। मैं तरह–तरह की धाँधलियाँ कर रहा था। अभ्यास की कसर बेईमानी से पूरी कर रहा था। हुच जाने पर भी डंडा खेले जाता था। हालाँकि शास्त्र के अनुसार गया की बारी आनी चाहिए थी। गुल्ली पर ओछी चोट पड़ती और वह जरा दूर पर गिर पड़ती, तो मैं झपटकर उसे खुद उठा लेता और दोबारा टाँड़ लगाता। गया यह सारी बे–कायदगियाँ देख रहा था; पर कुछ न बोलता था, जैसे उसे वह सब कायदे–कानून भूल गए। उसका निशाना कितना अचूक था। गुल्ली उसके हाथ से निकलकर टन से डंडे से आकर लगती थी। उसके हाथ से छूटकर उसका काम था डंडे से टकरा जाना, लेकिन आज वह गुल्ली डंडे में लगती ही नहीं! कभी दाहिने जाती है, कभी बाएँ, कभी आगे, कभी पीछे।

आध घंटे पदाने के बाद एक गुल्ली डंडे में आ लगी। मैंने धाँधली की–गुल्ली डंडे में नहीं लगी। बिल्कुल पास से गई; लेकिन लगी नहीं।

गया ने किसी प्रकार का असंतोष प्रकट नहीं किया।

'न लगी होगी।'

'डंडे में लगती तो क्या मैं बेईमानी करता?'

'नहीं भैया, तुम भला बेईमानी करोगे?'

बचपन में मज़ाल था कि मैं ऐसा घपला करके जीता बचता! यही गया गर्दन पर चढ़ बैठता, लेकिन आज मैं उसे कितनी आसानी से धोखा दिए चला जाता था। गधा है! सारी बातें भूल गया।

सहसा गुल्ली फिर डंडे से लगी और इतनी जोर से लगी, जैसे बंदूक छूटी हो। इस प्रमाण के सामने अब किसी तरह की धाँधली करने का साहस मुझे इस वक्त भी न हो सका, लेकिन क्यों न एक बार सबको झूठ बताने की चेष्टा करूँ? मेरा हरज ही क्या है। मान गया तो वाह–वाह, नहीं दो–चार हाथ पदना ही तो पड़ेगा। अँधेरे का बहाना करके जल्दी से छुड़ा लूँगा। फिर कौन दाँव देने आता है।

गया ने विजय के उल्लास में कहा–लग गई, लग गई। टन से बोली।

मैंने अनजान बनने की चेष्टा करके कहा–तुमने लगते देखा? मैंने तो नहीं देखा।

'टन से बोली है सरकार!'

'और जो किसी ईंट से टकरा गई हो?'

मेरे मुख से यह वाक्य उस समय कैसे निकला, इसका मुझे खुद आश्चर्य है। इस सत्य को झुठलाना वैसा ही था, जैसे दिन को रात बताना। हम दोनों ने गुल्ली को डंडे में जोर से लगते देखा था; लेकिन गया ने मेरा कथन स्वीकार कर लिया।

'हाँ, किसी ईंट में ही लगी होगी। डंडे में लगती तो इतनी आवाज न आती।'

मैंने फिर पदाना शुरू कर दिया; लेकिन इतनी प्रत्यक्ष धाँधली कर लेने के बाद गया की सरलता पर मुझे दया आने लगी; इसीलिए जब तीसरी बार गुल्ली डंडे में लगी, तो मैंने बड़ी उदारता से दाँव देना तय कर लिया।

गया ने कहा–अब तो अँधेरा हो गया है भैया, कल पर रखो।

मैंने सोचा, कल बहुत–सा समय होगा, यह न जाने कितनी देर पदाए, इसलिए इसी वक्त मुआमला साफ कर लेना अच्छा होगा।

'नहीं, नहीं। अभी बहुत उजाला है। तुम अपना दाँव ले लो।'

'गुल्ली सूझेगी नहीं।'

'कुछ परवाह नहीं।'

गया ने पदाना शुरू किया; पर उसे अब बिलकुल अभ्यास न था। उसने दो बार टाँड़ लगाने का इरादा किया; पर दोनों ही बार हुच गया। एक मिनिट से कम में वह दाँव खो बैठा। मैंने अपनी हृदय की विशालता का परिचय दिया।

'एक दाँव और खेल लो। तुम तो पहले ही हाथ में हुच गए।'

'नहीं भैया, अब अँधेरा हो गया।'

'तुम्हारा अभ्यास छूट गया। कभी खेलते नहीं?'

'खेलने का समय कहाँ मिलता है भैया!'

हम दोनों मोटर पर जा बैठे और चिराग जलते–जलते पड़ाव पर पहुँच गए। गया चलते–चलते बोला–कल यहाँ गुल्ली–डंडा होगा। सभी पुराने खिलाड़ी खेलेंगे। तुम भी आओगे? जब तुम्हें फुरसत हो, तभी खिलाड़ियों को बुलाऊँ।

मैंने शाम का समय दिया और दूसरे दिन मैच देखने गया। कोई दस–दस आदमियों की मंडली थी। कई मेरे लड़कपन के साथी निकले! अधिकांश युवक थे, जिन्हें मैं पहचान न सका। खेल शुरू हुआ। मैं मोटर पर बैठा–बैठा तमाशा देखने लगा। आज गया का खेल, उसका नैपुण्य देखकर मैं चकित हो गया। टाँड़ लगाता, तो गुल्ली आसमान से बातें करती। कल की–सी वह झिझक, वह हिचकिचाहट, वह बेदिली आज न थी। लड़कपन में जो बात थी, आज उसने प्रौढ़ता प्राप्त कर ली थी। कहीं कल इसने मुझे इस तरह पदाया होता, तो मैं जरूर रोने लगता। उसके डंडे की चोट खाकर गुल्ली दो सौ गज की खबर लाती थी।

पदने वालों में एक युवक ने कुछ धाँधली की। उसने अपने विचार में गुल्ली लपक ली थी। गया का कहना था–गुल्ली जमीन में लगकर उछली थी। इस पर दोनों में ताल ठोकने की नौबत आई है। युवक दब गया। गया का तमतमाया हुआ चेहरा देखकर डर गया। अगर वह दब न जाता, तो जरूर मार–पीट हो जाती।

मैं खेल में न था; पर दूसरों के इस खेल में मुझे वही लड़कपन का आनंद आ रहा था, जब हम सब कुछ भूलकर खेल में मस्त हो जाते थे। अब मुझे मालूम हुआ कि कल गया ने मेरे साथ खेला नहीं, केवल खेलने का बहाना किया। उसने मुझे दया का पात्र समझा। मैंने धाँधली की, बेईमानी की, पर उसे जरा भी क्रोध न आया। इसलिए कि वह खेल न रहा था, मुझे खेला रहा था, मेरा मन रख रहा था। वह मुझे पदाकर मेरा कचूमर नहीं निकालना चाहता था। मैं अब अफसर हूँ। यह अफसरी मेरे और उसके बीच में दीवार बन गई है। मैं अब उसका लिहाज पा सकता हूँ, अदब पा सकता हूँ, साहचर्य नहीं पा सकता। लड़कपन था, तब मैं उसका समकक्ष था। यह पद पाकर अब मैं केवल उसकी दया योग्य हूँ। वह मुझे अपना जोड़ नहीं समझता। वह बड़ा हो गया है, मैं छोटा हो गया हूँ।

शब्दार्थ

व्यसन – बुरी आदत; **थापी** – कुटेला, लकड़ी से बना बैट जैसा दिखने वाला; **गोइयाँ** – साथी, दोस्त; **जमघट** – लोगों की भीड़; **वशीकरण** – वश में करना; **घराँव** – घनिष्ठता, परस्पर मेलजोल का भाव, घर का सा संबंध;

सुधि – याद, स्मृति; **शास्त्र–विहित** – शास्त्र के अनुसार; **शास्त्र–सम्मत** – शास्त्र द्वारा समर्थित; **बेर** – समय; **बे–कायदगियाँ** – जो नियम या कायदे के विरुद्ध हो; **गुच्ची** – गुल्ली डंडा खेलने के लिए बनाया जाने वाला छोटा गड्ढा; **टाँड़** – गुल्ली पर किया गया आघात; **सलूक** – व्यवहार; **साईस** – ताँगा हाँकने वाला; **ज़हीन** – जिसका ज़ेहन तेज हो, मेधावी, प्रतिभावान, समझदार, बुद्धिमान; **जीट** – मौज; **पदना** – दाँव देना; **पदाना** – दाँव लेना।

अभ्यास

पाठ से

1. लेखक ने ऐसा क्यों कहा है कि गुल्ली–डंडा सब खेलों का राजा है?
2. ''मुझे न्याय का बल था। वह अन्याय पर डटा हुआ था'' लेखक खेल में पराजित होने के बाद भी अपनी ओर 'न्याय का बल' क्यों मानता है और 'वह' (गया) को 'अन्याय पर डटा' क्यों कहता है?
3. पिताजी अपने तबादले से दुःखी थे, जबकि लेखक खुश था। क्यों?
4. बीस साल बाद जब लेखक फिर से उस क़स्बे में पहुँचा, तो उस क़स्बे और लेखक दोनों में क्या–क्या बदलाव हो चुके थे?
5. लेखक के साथ खेलते हुए गया के मन में गुल्ली–डंडा के प्रति वही जोश और उत्साह देखने को नहीं मिला, जो बचपन में हुआ करता था। गया के व्यवहार में इस परिवर्तन के पीछे कौन से कारण रहे होंगे?
6. निम्नांकित कथनों के क्या अभिप्राय हैं :–

   (क) ''वह बड़ा हो गया है, मैं छोटा हो गया हूँ।''

   (ख) ''हमारे कई दोस्त ऐसे भी हैं, जो थापी को बैसाखी से बदल बैठे।''

पाठ से आगे

AHIH56

1. गुल्ली–डंडा एक ऐसा भारतीय खेल है जिसके लिए पैसे खर्चने की जरूरत नहीं पड़ती। अपने आसपास/परिवेश में प्रचलित ऐसे खेलों की सूची बनाइए। वर्तमान समाज में इन खेलों के प्रति घटते आकर्षण के क्या कारण हो सकते हैं?

2. गुल्ली–डंडा कहानी में इस खेल से जुड़े कुछ शब्द आए हैं; जैसे– दाँव, पदना/पदाना, हुच, गुल्ली आदि। अपने आसपास प्रचलित खेलों से जुड़ी शब्दावलियों की एक सूची बनाइए–

खेल के नाम	खेल से जुड़े शब्द

भाषा के बारे में

1. सामान्य अर्थ को छोड़कर विशेष अर्थ को प्रकट करने वाले वाक्यांश मुहावरे तथा वाक्य लोकोक्ति कहे जाते हैं। लोकोक्ति लम्बे लोक अनुभव को व्यक्त करने वाला सूत्र वाक्य होता है। कहानी में कई मुहावरे और लोकोक्तियों का प्रयोग हुआ है; जैसे–लोट–पोट हो जाना, हर्रे लगे न फिटकरी रंग चोखा आए, पिंड न छोड़ना आदि। इन मुहावरों के अलावा कहानी से अन्य मुहावरे भी ढूँढ़िए और उनका वाक्य में प्रयोग करते हुए अर्थ स्पष्ट कीजिए।

2. कहानी में 'बचपन', 'लड़कपन' जैसे शब्दों का प्रयोग हुआ है। 'बच्चा' और 'लड़का' में 'पन' प्रत्यय जोड़ने से यह नया शब्द बना है। 'बच्चा' और 'लड़का' जातिवाचक संज्ञा शब्द हैं, जबकि 'बचपन' और 'लड़कपन' भाववाचक संज्ञा शब्द हैं। कहानी से जातिवाचक संज्ञा शब्दों को छाँटकर उसका भाववाचक रूप बनाइए–

उदाहरण

जातिवाचक संज्ञा शब्द	भाववाचक संज्ञा शब्द
आदमी	आदमियत
मास्टर	मास्टरी

3. 'सोहन बस्तर में रहता है और **वह** रोज स्कूल जाता है।'

इस वाक्य में **वह** निश्चयवाचक सर्वनाम है, जिसका प्रयोग सोहन के लिए हुआ है। जबकि कहानी से ली गई अग्रलिखित वाक्यों में **वह** का प्रयोग सर्वनाम के रूप में किसी व्यक्ति को सूचित नहीं करता है। हिन्दी भाषा में **वह** सर्वनाम शब्द का प्रयोग कई बार दूर या अनुपस्थित व्यक्ति को सूचित करने के अतिरिक्त भाव या विचार के लिए भी होता है। जैसे–

वह प्रातःकाल घर से निकल जाना, **वह** पेड़ पर चढ़कर टहनियाँ काटना और गुल्ली–डंडे बनाना, **वह** उत्साह, **वह** खिलाड़ियों के जमघट, **वह** पदना और पदाना, **वह** लड़ाई–झगड़े, **वह** सरल स्वभाव, जिससे छूत–अछूत, अमीर–गरीब का बिल्कुल भेद न रहता था, जिसमें अमीराना चोंचलों की, प्रदर्शन की, अभिमान की गुंजाइश ही न थी, यह उसी वक्त भूलेगा जब .... जब ...

- उपर्युक्त वाक्यों की तरह **वह** का प्रयोग करते हुए पाँच वाक्य बनाइए।
- उसी वक्त भूलेगा जब .... जब ... वाक्य को पूरा कीजिए।

योग्यता विस्तार

1. छत्तीसगढ़ के राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त खिलाड़ियों से जुड़ी जानकारियों को पत्र–पत्रिकाओं से इकट्ठा कीजिए और उनके जीवन से जुड़ी घटनाओं और प्रसंगों को कक्षा में साझा कीजिए।
2. 'पढ़ोगे लिखोगे बनोगे नवाब, खेलोगे कूदोगे होगे ख़राब' समाज में प्रचलित इस मान्यता से आप कहाँ तक सहमत हैं। इस पर कक्षा में वाद–विवाद प्रतियोगिता का आयोजन कीजिए।
3. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी द्वारा लिखित निबंध **खेल भी शिक्षा ही है** को पुस्तकालय/इंटरनेट/शिक्षक की सहायता से ढूँढ़कर पढ़िए और सहपाठियों से इस पर चर्चा कीजिए।
4. क्रिकेट खेलने के लिए किन–किन सामग्रियों की आवश्यकता होती है। इन सामग्रियों की बाजार में कीमत पता कीजिए तथा किसी भी देशी/स्थानीय खेल में आने वाले खर्च से इसकी तुलना कीजिए।

AX2N8G